समग्र प्रकाशन परिवार

- ❑ बैनाड़ा परिवार, आगरा (उ.प्र.)
- ❑ सुमेरमल पांड्या एवं पांड्या परिवार, आगरा (उ.प्र.)
- ❑ पवन कुमार, अशोक कुमार, निर्मल कुमार, विनोद कुमार दोशी, इन्दौर एवं बाकानेर (म.प्र.)
- ❑ संजय जैन पिताश्री स्व. खेमचंद जैन (मेक्स) एवं राजेन्द्रकुमार पिताश्री पूरनचंद जैन, इन्दौर (म.प्र.)
- ❑ भंवरलाल पाटई एवं पाटई परिवार, गुना (म.प्र.)
- ❑ संतोष कुमार जयकुमार जैन, सागर (म.प्र.)

प्राप्ति स्थान :
संतोषकुमार जयकुमार जैन (बैटरीवाला)
कटरा बाजार, सागर (म.प्र.)

समग्र

खंड तीन

आचार्य श्री विद्यासागर जी

समग्र प्रकाशन, सागर (म. प्र.)

प्रेरणा एवं शुभाशीष :

परमपूज्य - मुनिश्री १०८ क्षमासागर जी

परमपूज्य - ऐलक श्री १०५ उदार सागर जी

परमपूज्य - ऐलक श्री १०५ सम्यक्तव सागर जी

समग्र - आचार्य श्री विद्यासागर जी

प्रकाशक - **समग्र प्रकाशन**, सागर (म. प्र.)

मुद्रक - **शकुन प्रिन्टर्स**, ३६२५ सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-२

नर्मदा का नरम कंकर

अमितात्क्षर

[illegible] शब्द - विन्यासों, विविध भावाभिव्यंजनाओं एवं [illegible] आकृत है। व्यक्तित्व की सत्ता को नहीं छूती [illegible] परम पदार्थ की प्ररूपिका है; परम शान्त [illegible]

[illegible] तथापि सही दिशाबोध के अभाव [illegible] बैठा है। उसे यह विदित नहीं है [illegible] भीतरी अनी से फूटता है। ज्ञाता [illegible] केन्द्र बिंदु दृश्य नहीं है, परन्तु [illegible] इस स्वामीपन [illegible] क्षरातीत - अन्तरहित, [illegible] चरम ध्येय है।

[illegible] सम्पादक श्री [illegible] कोटिशः [illegible] है, उस [illegible] भावों, [illegible] सम्पादन हुआ है। धन्य! [illegible]

[illegible] आचार्य प्रवर श्री ज्ञानसागर [illegible] अभय चिन्ह - चिन्हित [illegible] समर्पण करता हुआ ......!

[illegible]चरणारविन्द चंचरीक
ॐ शुद्धात्मने नमः
ॐ निरंजनाय नमः
ॐ जिनाय नमः
ॐ निजाय नमः
(आचार्य श्री विद्यासागर महाराज)

अनुक्रम

१. वचन सुमन
२. हे! आत्मन्
३. मानस हंस
४. अपने में .... एक बार
५. भगवद् – भक्त
६. एकाकी यात्री
७. एक और भूल
८. मनमाना मन
९. शेष रहा चर्चन
१०. मानस दर्पण में
११. बिन्दु में क्या .....?
१२. नर्मदा का नरम कंकर
१३. पूर्ण होती पाखूँड़ी
१४. प्रभू मेरे में/ मैं मौन
१५. समर्पण द्वार पर
१६. जीवित समय सार
१७. शरण – चरण
१८. दर्पण में एक और दर्पण
१९. वंशीधर को
२०. विभाव अभाव
२१. हे निरभमान!
२२. आकार में निराकार
२३. स्थित प्रज्ञा
२४. अधरों पर (अभिव्यक्ति)
२५. अर्पण
२६. लाघव भाव
२७. प्रतीक्षा में
२८. अमन
२९. वहीं वहीं कितनी बार

वचन सुमन

हे ! महाज्ञान !
महाप्राण !
एकमेव
मेरे त्राण
प्राण प्रयाण की ओर
प्रतिकूल प्रकृति से
सुरक्षित कर
प्रकृति अनुकूल
उजल उजल
शीतल सलिल
सिंचन किया
प्राण द्रुम मूल में
आमूल चूल
विगत – अनागत
भूल
जैसे फूले
फूल

कृतज्ञता की अभिव्यक्ति
भावाभिव्यक्ति
कर लूँ उपयोग
जो मिली है
प्रसाद शक्ति
होने तुम सा !
अमन !
वचन सुमन
स्वीकार हो !
हे परम शरण !
समवशरण !
चरम चरण !
अंतिम चरण !

□□□

हे! आत्मन्

अपने सहज शुद्ध
अनन्त गुणों
गुणों के
[illegible]
[illegible]
गुणी गुणों से
बिना मूल्य शांति आनंद
व्यतीत किया है
अनन्त काल !

यह संसार सकल
[illegible] है
पीड़ित है
आकुल विकल
कारण और है इसमें

[illegible] ने कभी [illegible]
[illegible] राग को
[illegible] ने कभी बिसारा
वीतराग को
[illegible] है
संसार भर में केवल
परम शरण
तारण तरण !

□□□

मानस हंस

आप
असम्मति प्रकट कर नहीं सकते
यह मेरा निर्णय
स्वीकार करना पड़ेगा आपको
कि
आपका श्रीपाद
सुखद निरापद
अगाध ! मानस
आनन्द की अपरिमेय लहरों से
लहरा रहा है
अन्यथा
तट पर तैरती हुई
गज मुक्ता को भी
पराजित करती हुई
अपनी अनुपम अनन्य
मृदु मंजु कान्ति से
छविमय शुचिमय
शशि सित धवला
औ' नखपक्तियों के मिष
मौक्तिक मणियाँ
चुन चुन चुगने क्यों
तत्पर है !

मंद मंद
हँसता हँसता
यह मम मानस हंस !
सब हंसों के
सब अशों के
अंश अंश के
पूरक अंश !
हे परम हंस !
हे अनुत्तर
उत्तर दो !

□□□

अपने में ....एक बार

पग चला /चला
[illegible] हो चली
प्राची अरुणिमा
चला
मंद मंद सुगंध पवन
पवन की इच्छा है

अच्छा होगा !
होगा स्वच्छ मम जीवन भी

एक बार सहर्ष
वीर चरण स्पर्श
कर लूँ ! अंतिम दर्श

न जाने अनागत जीवन !
क्या विश्वास ?
आया न आया श्वास

लता, लता के चूल पर
फूले फूल दल
फूले न समाते
स्वर्ग वीर चरणों में
करते समर्पण
स्मित सुमन !

सन्मति के पद – पयोज पर
पयोज – पराग – लोलुपी
भव्य अलिगण
खुल खिल गुन गुन गुंजार
नाच नाचते
मन ही मन

एक अपूर्व आस्था !
मानो कहते
हम अमर बनेंगे / नहीं मरेंगे
जो किया सुधा सेवन
अपूर्व संवेदन
अनिमेष निरखती
जो धरती
युगवीर को/धीर को/गुणगंभीर को
धन्यतमा मानती
स्वयं को
तृण बिन्दुओं के मिष से
दृग बिन्दुओं से
इंदु समान महावीर के
कर पाद प्रक्षालन !
पावा उद्यान
आरूढ हो ध्यान यान
किया वर्द्धमान ने
निज धाम की ओर
महाप्रयाण !
हे वीर !
हो स्वीकार
मम नमस्कार
बने साकार
जो उठते बार बार विचार
मम मानस तल पर !

भगवद् भक्त

सराग पथ का वर्धक
साधक !
विराग पथ का
बाधक !

निस्सार
निष्प्रयोजन !
जान / मान
अनुभव कर
जात पात से
पक्षपात से
ऊपर उठा हुआ
मैं

भगवद् भक्त !
मेरे साथ
केवल गात

मुझे मिले
भाव भक्तिमय
धवल धवल

दो पंख !
पंख के बल पर
और लघुतम हुआ
अर्कतूल !
ऊपर उड़ता हुआ उड़ता हुआ
अपरिचित ऊँचाइयाँ
लाँघता लाँघता हुआ
वहाँ पहुँच गया हूँ
विषय वासना व्याप्त
धरती का गुरुत्वाकर्षण
नहीं करता आकर्षित
हर्षित, तर्षित
किन्तु यह कैसा
अद्भुत! अदम्य! चुम्बकीय !
परम गुरु का आकर्षण
गुरुत्वाकर्षण !

प्रयत्न / प्रयास
आवश्यक नहीं
सब कुछ सहज /सरल
स्वतंत्र
और
मैं तैर रहा हूँ
चेतना के विशाल विस्तृत
निरभ्र आकाश मण्डल में
नयन मनोहर
विहंगम दृश्य का

अनिमेष
अवलोकन करता हुआ
अपने को पाया
[illegible]िरा हुआ
स्वतंत्रता के दिव्य तेजोमय !
[illegible]भा मण्डल में
[illegible]िदित हुआ है
[illegible]
[illegible] किन्तु सहज क्रिया का
[illegible] सूत्रपात है
[illegible]जात है
[illegible] राचमुच
[illegible] राब कुछ
[illegible] तात है
[illegible] एक साथ
[illegible]
[illegible] करण
[illegible] तन
[illegible] सादर
[illegible] प्रणिपात है
[illegible]
[illegible]शाल भाल पर
[illegible] कुन्दन कुंकुम
[illegible] हुआ है
[illegible]
[illegible] रहा है

सारा तिमिर
भग रहा है
सोया जीवन
जग रहा है
जग रहा है
जग रहा है
कि
जिससे फूटती हुई
प्रचंड ज्वालामुखी सी
त्रिकोणी लपटों में
आगामी अनंत काल के लिए
काल काम त्रस्त हो रहे हैं शनैःशनै
पूर्ण ध्वस्त हो रहे हैं
एकमेव !
देवाधिदेव !
जय महादेव
शेष ....

□□□

एकाकी यात्री

हे आशातीत !

अपार/अपरम्पार
आशारूपी
महासागर का
पार/किनार

कैसा पा लिया?
[illegible] !
जिसका अवगाह
पाताल से संबंधित

जिसके तट !
अनंत से चुंबित
विषमतामय विषय
क्षार जल से भरपूर

जिसको पार करते
अतीत में
बार बार
कई बार
हार कर
थक चुका हूँ

फिर भी
अब की बार

उस पार
पहुँचने का
पूरा विश्वास
मन में धार
यद्यपि शारीरिक पक्ष
अत्यन्त शिथिल
दौर्बल्य का अनुभव !

केवल
आत्मीय पक्ष !
निष्पक्ष
सलक्ष्य

अक्ष विषय से ऊपर उठा हुआ
आपको बना साक्ष्य
आदर्श प्रत्यक्ष

अपने कार्य क्षेत्र में
पूर्ण दक्ष!
साक्षी बने हैं

साहस उत्साह
और अपने
दुर्बल बाहुओं से
निंरतर तैर रहा हूँ

एकाकी यात्री
अबाधित यात्रा कर रहा हूँ
अपार का पार पाने

बीच बीच में
इन्द्रिय विषयमय

राग रंगिनी
तरल तरंगमाल
मुझ बाल के गले में
आ उलझती हैं,

पर! क्षणिका मिटती है
यह ! उलझता नहीं
उस उलझन में

कभी
विकराल मगरमच्छ
नीचे की गहराई में से आ
अविरल साधनारत मेरे
पैर पकड़ कर
नीचे ले जाने का साहस
प्रयास भर करता है

किन्तु असफल

कभी
विपरीत दिशा की ओर
तीव्रगति से
बाधा करने वाली
कषाय हिमालय की
हिमानी चट्टानें
मेरी हिम्मत चुराने की
मुझे चूर चूर करने की
हिम्मत करती है

किन्तु उनसे बच
सुरक्षित निकलता हूँ

आगे आगे
भागे भागे
इन सभी अनुकूल प्रतिकूल
स्थितियों में से
गुजरता हुआ भी
आत्मा में
नैराश्य की भावना
संभावना भी नहीं

तथापि
ऐसे ही कुछ
पूर्व संस्कार के
मादक बीज
आये हों बोने में
धूल धूसरित
आत्म सत्ता के
किसी कोने में
अंकुरित हो न जायें
उनकी जड़ें
और गहराई में
उतर न जायें
ऐसा
विभाव भाव भर
उभर आता है
कभी कभी

बाल भक्त के
भावुक भावित
मानस तल पर

फलस्वरूप
नहीं के बराबर
गीति का संवेदन
करता है
कसमसायमान
मेरा मन

गुमराह !
अरे अब तक
कहाँ तक आया हूँ
यह भी विदित नहीं

हे दिशा सूचक यंत्र !
दिशा बोध तो दो
पारदर्शन नहीं हो रहा है
अभी कितनी दूर!
इतनी दूर वो रहा!

ऐसी ध्वनि ओंकार !
कम से कम
प्रेषित कर दो
इन कानों तक

हे मेरे स्वामी !
अपार पारगामी !

□□□

एक और भूल

अपनी ही भूल
चल चल चाल
प्रतिकूल
विषय विलासता में
लीन विलीन
झूला झूल
दिन रात
क्षणिक नश्वरशील
संवेदित सुखाभास से
मृदुल लाल उत्फुल्ल
गुलाब फूल से भी
अधिक फूल
मोहभूत के
वशीभूत हो
भूत सदृश
भूतार्थ मूल
भूत में
दुख वेदना यातना
निरंतर अनुभव किया
प्रभूत !
आपने भी

जब यह गूढतम रहस्य
तप पूत गुरुओं की
सुखदायिनी
दुखहारिणी
वाणी
सुनकर
प्रशस्त मन से !
विदित हुआ
आपको

कि
अपनी चेतना की
निगूढ सत्ता में
मायाविनी सत्ता
बलवत्ता से आकर
प्रविष्ट हुई है

अदृष्ट!
दृष्टि अगोचर !
कृत संकल्प
हुए आप

नहीं विलंब स्वल्प भी
अविलम्ब !
अल्पकाल में ही

कल्पकाल से आगत का
बहिष्कार आवश्यक

काल ने करवट लिया अब
वह काल नहीं रहा
स्वागत का
रहा केवल स्वारथ का
उतर गया
माया की गवेषणा को
गवेषक
बेशक
उपयोग की केन्दीय सत्ता पर
सत्ता के कोन कोन
बौद्धिक आयाम से
अविराम !
चिंतन की रोशनी में
छन गये

पर
पर क्या ?
माया की सत्ता का
पता?
लापता
उसी बीच
गवेषक की बुद्धि में
सहज बिना कसरत
एक युक्ति झलक आयी

कि
उपयोग की समग्र सत्ता को
जला दिया जाय !
तो
निश्चित
अनंत लपटों से
धू धू करती
धधकती
परम ध्यानमय
निर्धूम अग्नि से
उपयोग की विशाल सत्ता
तपने लगी
जलने लगी

तभी
गहराई में गुप्त लुप्त सुप्त
माया की सत्ता
ज्वर सूचक यंत्रगत
पारद रेखा सम !
उपयोग केन्द्र से
यौगिक परिधि में
मन वचन तन के वितान में
चढ़ती फैलती देख
पुरुष ने
योग निग्रह
संकोच किया
सूक्ष्मीकरण
विधान से

उपयोग योग से
बहिर्भूत स्थूलकाय में
उसे ला, जलाना प्रारम्भ किया
फलस्वरूप
वह पूर्ण काली होकर
बाहर आकर
विपुल जटिल कुटिल
आपके उत्तमांग में उगे
बालों के बहाने

अपने स्वरूप
कुटिलाई का परिचय
देती हुई वह माया
जड़ की जाया
छाया !
हे निरामय !
हे अमाय!

□□□

मनमाना मन

माना
मानता नहीं मन

मनाने पर भी
मनमाना
करता है माँग

मना करने पर भी
फिर भी
विषयों की ओर !
बार बार
गतिमान धावमान
स्वयं बना है
नादान

हिताहित के विषय में
स्व पर बोध
नहीं रखता
अनजान!

इसकी इस
स्वच्छन्दता
उच्छृंखलता
देख जान
होंगे आप
पीड़ित परेशान

और इसे
नियंत्रित सेवक बनाने
अथवा पूर्ण मिटाने
षड्यंत्र की योजना में
इसी की सहायता से
होंगे सतत
प्रयत्नवान
फिर भी आप
जानते मानते
अपने आप को
धीमान सुजान !
इससे मैं
विस्मितवान !
मन को मत छेड़ो
बिना मतलब
उसे
मत मारो, छोड़ो
सँभालो सुधारो
दया द्रवीभूत
कण्ठ से
विनय भरे
हित मित मिष्ट
वचनों से
वह नादान
नादानी तज

बने मतिमान
सही सही समितिमान
मोक्ष पथ का पथिक
गतिमान औ प्रगतिमान

बिना मन
चढ़ नहीं सकता
मोक्ष महल का
वह सोपान
यह असुमान !

बिना मन
हो नहीं सकता
वह अनुमान
केवलज्ञान !
पूर्ण प्रमाण !

बिना मन
हो नहीं सकता
मोक्ष महल का
आविर्माण
नवनिर्माण !

तनिक हो सावधान
उस ओर दो
तनिक ध्यान
कि
मन का मत करो
उतना शोषण !

मत करो मन का
उतना पोषण !

पोषण से
प्रमाद पवमान
अप्रमादवान
प्रवहमान

तब बुझता है आत्मा का
शिव पथ सहायक
वह रोशन !

मन का शोषण
उल्टा तनाव
उत्पन्न करता है

तनाव का प्रभाव
उदित हो निश्चित
विभाव/विकार भाव

फलतः
जीवन प्रवाह
विपरीत दिशा की ओर !
होता प्रवाहित
भरता आह !

श्राव्य/श्रुति मधुर
स्वर लहरी
लय ध्वनियाँ
सुनना है यदि
वीणा का तार

इतना मत कसो
कि
टूट जाय

संगीत संवेदना की धार
छूट जाय

और
इतना ढीला भी नहीं
कि
अनपेक्षित रस विहीन
स्वर लयों का झरना
फूट जाय

माना
मन करता
अभिमान
चाहता है गुरुओं से भी
उच्च उत्तुंग स्थान

चाहता अपना
सम्मान/मान
सदा सर्वथा
तीन लोक से
पद-प्रणाम
पूजा नाम

तथापि उसे समझाना है
स्वभाव की ओर लाना है

क्योंकि उसे
अज्ञात है
गुण गण खान
अव्यय द्रव्य
भव्य दिव्य

ज्ञात है केवल
पर प्रभावित
वह पर्याय

यदि उसमें जागृत हो
स्वाभिमान
तभी बनेगा
वही बनेगा
निरभिमान

मानापमान
समझ समान

फिर
फिर क्या!

आरूढ़ हो ध्यान यान
पल भर में
प्रयाण

जिस ओर ओ
है निज धाम
है निर्वाण

वही मन
भावित मन
करे स्वीकार

मेरे इन
शत शत प्रणाम !
शत शत नमन !

□□□

शेष रहा चर्चन

अविचल
मलयाचल-गत
परम सुगंधित
चंदन-वंदित
आताप-वारक
चंदन-पादप

जिनसे
लिपटी/चिपटी
पूँछ के बल पर
बदन घुमाती
उड़न चाल से
चलने वाली
चारों ओर
मोर शोर भी
ना गिन

गंधानुरागिन
अनगिन
नागिन !
स्वस्थ समाधिरत
योगिन सी
पर

उन्हीं घाटियाँ
पार कर रहा
मन्द/मन्दतम
चाल चल रहा
अनिल अविरल अहा !

श्रान्त क्लान्त है
शान्ति की नितान्त
प्यास लगी है उसको
आत्म प्रान्त में

तड़फड़ाहट
अकस्मात् !
भाग्योदय !
दयनीय हृदय
अपूर्व संवेदन से
गद्गद हुआ
हुआ पीड़ा का
विलय प्रलय

आपके
अपाप के
मुक्त परिताप के
चरणारविन्द का

जिससे पराग झर रही
मृदुल संस्पर्श पाकर
पराग भरपूर पीकर
निस्संग बहता बहता
वह !

सर्वप्रथम
अपने साथी
भ्रमर दल को
सारा वृत्तान्त
सुनाया जाकर

संवेदित अपूर्व
पराग दिखाकर
आपके प्रति राग जगाया
सादर

भीतर और बाहर
धन्यवाद कह
बाद वह
अलिदल
चल पड़ा
बाहर सूचित
दिशा की ओर

वायुयान गति से
प्रतिमुहूर्त
सौ सौ योजन
बनाकर केवल
प्रयोजन
रसमय अपना
भोजन

सुनो फिर तुम
क्या हुआ भो ! जन !
किया प्रणाम बार

दर्शन सार
परमोत्तम का
पुरुषोत्तम का

रत्नत्रय प्रतीक
तीन प्रदक्षिणा
दे कर

पुनीत/पावन
पाद पद्म में
प्रमुदित प्रणिपात

नतमाथ
तभी तैर कर आया
विगत आगत का
जीवन प्रतिबिम्ब
स्वच्छ/शुद्ध
विजित-दर्पणा
प्रभु की
विमल-नखावली में

अलिदल दिल
हिल गया
पिघल गया
जो किया है
कर्म ने वही
अब दिया है
फल-प्रतिफल पल पल

अपना आनन
अपना जीवन
सघन तिमिरसम

कालिख व्याप्त
लख कर
मानो विचार कर रहा
मन में
कि
पर पदार्थ का ग्रहण
पाप है

किन्तु
महापाप है
महाताप है
करना पर का संचय
संग्रह
इस सिद्धांत का
परिचायक है

मेरा यह
तामसता का एकीकरण
संग्रह !

विग्रह मूल, विग्रह !
तभी से वह
भ्रमर दल
चरण कमल का केवल
करता अवलोकन

पल भर बस !
छूता है
विषयानुराग से नहीं
धर्मानुरागवश।

गुन गुनाता
कहता जाता
भ्रामरी चर्या
अपनाओ !

शेष रहा
ना अपना ओ
सपना ओ

आश्चर्य !
प्रथम बार दर्शन
जीवन का कायाकल्प

अल्प काल में
अनल्प परिवर्तन
क्रांति !
संतोष संयम शांति

धन्य !
किन्तु खेद है !
नियमित प्रतिदिन
आपका दर्शन/वंदन
पूजन/अर्चन
तात्विक चर्चन
समयसार का मनन !

फिर भी
तृण सम
जिन का तन जीर्ण शीर्ण
इन्द्रिय गण में
शैथिल्य

विषय रसिकों में
प्रथम श्रेणी उत्तीर्ण
जिन का तामस मन !
आर्थिक चिंताओं से
आकीर्ण
जिनका रहता भाल

साधर्मी को लखकर
करते लोचन लाल
चलते अनुचित चाल

आत्म प्रशंसा सुनकर
जिन के खिलते गाल

धर्म कर्म सब तजते
जहाँ न गलती अपनी दाल !

रटते रहते
हम सिद्ध हैं
हम बुद्ध हैं
परिशुद्ध हैं

तनिक दाल में/नमक कम हो
झट से होते क्रुद्ध हैं

कहते जाते
जीव भिन्न है
देह भिन्न है
मात्र जीवन से
दर्शन ज्ञान अभिन्न

तनिक सी प्रतिकूलता में
होते खेद खिन्न !

यह कैसा
विरोधाभास ?

विदित होता है
भ्रमर का प्रभाव भी
इन भ्रमितों पर
पड़ा नहीं

हे ! प्रभो!
प्रार्थना है
कि
इनमें
ज्ञान भानु का उदय हो

विभ्रम तम का विलय हो
इन्द्रिय दल का दमन करें
मोह मान का वमन करें
कषाय गण का शमन करें
शिव पथ पर सब गमन करें

बनकर साथी
मेरे साथ
दो आशीष
मेरे नाथ !!

□□□

मानस दर्पण में

मिट्टी की दीपमालिका
जलाते बालक बालिका
आलोक के लिए
ज्ञात से अज्ञात के लिए
किन्तु अज्ञात का/अननुभूति का/अदृष्ट का
नहीं हुआ संवेदन/अवलोकन

वे सजल लोचन
करते केंवल जल विमोचन
उपासना के मिष से
वासना का, रागरंगिनी का
उत्कर्षण हा ! दिग्दर्शन
नहीं नहीं कभी नहीं
महावीर से साक्षात्कार

वे सुंदरतम दर्शन
उषा वेला में
गात्र पर पवित्र
चित्र विचित्र
पहन कर वस्त्र
सह कलत्र पुत्र
युगवीर चरणों में

सबने किया मोदक समर्पण
किन्तु खेद है
अच्छ स्वच्छ औ' अतुच्छ
कहाँ बनाया मानस दर्पण ?

तमो रजो गुण तजो
सतो गुण से जिन भजो
तभी मँजो/तभी मँजो
जलाओ हृदय में जन जन दीप
ज्ञानमयी करुणामयी
आलोकित हो/दृष्टिंगत हो/ज्ञात हो
ओ सत्ता जो समीप।

□□□

बिन्दु में क्या ..... ?

मम चेतना की धरती पर
उतर आया है सहज
एक भाव
कि
अब इस बिन्दु को
विनीत भाव से
अर्पित समर्पित कर दूँ
सिन्धु को
क्योंकि व्यक्तित्त्व की सत्ता का
अनुभव
सुख का नहीं
दुख का
अमूर्त का नहीं
मूर्त का
द्रव्य द्रष्टा का नहीं
क्षय दृश्य का
दर्शक है
नितान्त !

हे अपार सिंधु ! अपरंपार !
इस बिन्दु को
अवगाह दो
अवकाश दो
अपनी अगम/अथाह
महासत्ता में
जिसमें मनमोहक
सुख संदोहक
अविरल/अविकल
तरल तरंगें उठती हैं
ओर-छोर तक जा
लीन विलीन हो जाती हैं
उस दृश्य को
तुम्हारी पीठ पर
आसीन हो
देख सकूँ
किन्तु वे बिन्दु में क्या?
उठती हैं !
क्या
बिन्दु के बिना
उठती हैं ।

□□□

नर्मदा का नरम कंकर

युगों युगों से
जीवन विनाशक सामग्री से
संघर्ष करता हुआ
अपने में निहित
विकास की पूर्ण क्षमता संजोय
अनन्त गुणों का
संरक्षण करता हुआ
आया हूँ
किन्तु आज तक
अशुद्धता का विकास
हास
शुद्धता का विकास
प्रकाश
केवल अनुमान का
विषय रहा विश्वास
विचार साकार कहाँ हुए ?
बस ! अब निवेदन है
कि या तो इस कंकर
को फोड़ फोड़ कर
पल भर में
कण कण कर
शून्य में
उछाल
समाप्त कर दो
अन्यथा
इसे
सुन्दर सुडौल
शंकर का रूप प्रदान कर
अविलम्ब
इसमें
अनंत गुणों की
प्राण प्रतिष्ठा
कर दो
हृदय में अपूर्व निष्ठा लिए
यह किन्नर
अकिंचन किंकर
नर्मदा का नरम कंकर
चरणों में
उपस्थित हुआ है
हे विश्व व्याधि के प्रलयंकर।
तीर्थंकर !
शंकर !

□□□

पूर्ण होती पाँखुडी

अकस्मात्
अप्रत्याशित
घटना घटी
न ज्ञान था
न अनुमान
भाग्य!
अपरिमाण का
अपरिणाम का प्रमाण का
साक्षात्कार !

परिणाम यह हुआ
कि
अप्रमाण परिमाण में
विनत भाव पूरित
परिणाम आविर्भूत हुआ है

कि स्वीकार हो
प्रणाम
किन्तु
कर कमल कुड्मलित नहीं हुए
मुकुलित नहीं हुए
खिले खुले ही रहे
याचक बन कर .....!
मस्तक तक अवनत नहीं हुआ

मुख खुला नहीं
रहा बन्द
अन्दर उठते हुए शब्द
नहीं बने मधुर छन्द
बाहर आकर!

क्योंकि
विषयों की विषय दाह से
पूरी तपी चिर तृषित
आमूल चूल फैली चेतना
संकुचित हो, संकलित हो
आँखो में आ
आँखों से
हे पीयूष पूर!
रूपागार !
अनगार !
अपरूप रूप का/अरूप का
अनुपान कर रही

उस तरह
जिस तरह
ग्रीष्मकालीन
तरुण अरुण की
प्रखर किरणों से
संतप्त धरती
वर्षाकाल के
अपार जल को
बिना श्वास लिये
पीती है !

□□□

प्रभु मेरे में मैं मौन

लोक को
अलोक को
आलोकित करने वाले
आलोक धाम
ललाम लोचनों का
अलोल
अडोल
तिमिराच्छन्न
लोचनों ने
अवलोकन किया
धन्य !

प्रतीत हो रहा है
कि
मम लोचन प्रतिछवि में
प्रकाशपुंज प्रभु
तैर रहे हैं
अपने पावन जीवन में
एक साथ
उघड़े हुए
अनंत गुणों के साथ

अद्‌भुत परिणमन यह
काल !
भेद की रेखा
आल जाल
अन्तराल कहाँ संवेदित है ?
कि
मैं कौन?
प्रभु कौन?
दोनों दिगम्बर
मौन !
इस परिणमन के केन्द्र में
मुख्य औ गौण की विधि
स्वयं गौण !
इसी बीच
मेरे मन में
विकल्प ने करवट लिया
कि
ध्रुव को छूने के लिए
यह सुंदर अवसर है

और मैं .....
सविनय.....
दोनों घुटने टेक
पंजों के बल बैठ
दो दो हाथों से
अकम्प/अक्षय/अखंड दीपक
की ओर

चिर बुझा
दीपक बढ़ाया
जलाने
जोत से जोत मिलाने

किन्तु
न जाने
यह कौन सी सत्ता
बलवत्ता ने
महासत्ता की ओर
जाती हुई मम सत्ता को
रोका है
टोका है

मध्य में
व्यवधायक बन
व्यवधान उपस्थित किया है

अकस्मात्
अकारण
हे तरण तारण
चरणों में शरणागत को
दो शरण
दो !
दो किरण !

□□□

समर्पण द्वार पर

दिगम्बरी दीक्षा
पश्चात्
पावन वेला में
परम पावन तरण तारण
गुरु चरण सान्निध्य में
ग्रन्थराज 'समयसार' का
चिंतन
मनन
अध्ययन
यथाविधि प्रारंभ हुआ

अहा !
यह थी गुरु की गरिमा
महिमा/अस्तिमा

कि
कन्नड भाषा-भाषी
मुझे
अत्यन्त सरल/श्रुति मधुर
भाषा शैली में
'समयसार' के
हृदय को
खोल खोल कर

बार बार दिखाया

प्रति गाथा में
अमृत ही अमृत भरा है
और
मैं पीता ही गया
पीता ही गया

माँ के समान गुरुवर
अपने अनुभव और मिला कर
घोल घोल कर
पिलाते ही गये
पिलाते ही गये !
मुझे !
शिशु बाल मुनि को !

फलस्वरूप
उपलब्धि हुई
अपूर्व विभूति की
आत्मानुभूति की

और 'समयसार'
ग्रन्थ भी

ग्रन्थ / परिग्रह
प्रतीत हो रहा है
पीयूष भरी गाथायें
रसास्वादन में
डूब जाता हूँ
अनुभव करता हूँ
कि

ऊपर उठता हुआ
उठता हुआ
ऊर्ध्वगममान होता हुआ
सिद्धालय को
पार कर गया हूँ
सीमोल्लंघन कर गया हूँ

अविद्या कहाँ ?
कब ?
सरपट चली गई
पता नहीं रहा

आश्चर्य यह है कि
जिस विद्या की चिरकालीन
प्रतीक्षा थी
उस विद्यासागर के भी पार
बहुत दूर
दूरातिदूर
पहुँच गया हूँ

अविद्या/विद्या से परे
ध्यान-ध्येय/ज्ञान-ज्ञेय से परे
भेदाभेद/खेदाखेद से परे

उसका साक्षी बनकर
उद्ग्रीव उपस्थित हूँ
अकम्प निश्चल शैल !
चारों ओर छाई है
सत्ता महासत्ता
सब समर्पित अर्पित
स्वयं अपने में

□□□

जीवित समयसार

शुद्धता की चरम सीमा पर
सानन्द नर्तन करता हुआ
शुद्ध स्फटिक मणि से
निःसृत
दधि दुग्ध धवलित
निर्जरा का निर्झर! निर्झर !
झर ! झर ! झर!

अरुक / अथक
अनाहत गति से
उस ध्रुव बिन्दु की ओर
अपार अनंत
सिन्धु की ओर
पथ में किसी से
वार्ता नहीं
किसी से चर्चा नहीं
किसी प्रलोभनवश
किसी सम्मोहनवश
अन्य किसी की अर्चा नहीं

तथापि मौन भाषा में
अविरल/अविकल
मनमोहक संगीत
गुनगुनाता
सहज सुनाता
जा रहा ! कि

उपास्य के प्रति
अपने जीवन के
अपने सर्वस्व के
अर्पण में
समर्पण में ही
उपासना का
साकार !
निराकार !
निर्विकार !
दर्पण निहित है

जिस दर्पण में
उपास्य की
उपासक की
एवं
उपासना की
गतागत
अनागत प्रतिछवियाँ
गुण मणियाँ
झिलमिल झिलमिल
निधियाँ
तरल तरंगित हैं

लो !
यह कैसा ? अद्‌भुत परिणमन
विविध गुणों के सुमन
विलस रहे हैं
वस्तुतः सब कुछ उपलब्ध हुआ है
इस समय
तभी खुल खिल विहँस रहे हैं
प्रति समय
उनके परिणाम
अविराम विनस रहे हैं

किन्तु गुणों का अभाव !
नहीं हो रहा है
रहा है सद्‌भाव
तद्‌भाव !

क्योंकि परिणमन रूपी
बहता हुआ पवन
मन्द मन्द
उन गुण सुमनों के
मकरन्द को
सम्पूर्ण चेतना मंडल में
प्रसारित कर रहा है

फलस्वरूप
समग्र जीवन सुगंधित हो
महक उठा है

सुन लो !
तब यह गीत
महक उठा है